।। घट परचा को अंग ।।

मारवाडी + हिन्दी

*

महत्वपूर्ण सुचना–रामद्वारा जलगाँव इनके ऐसे निदर्शन मे आया है की,कुछ रामस्नेही सेठ साहब राधाकिसनजी महाराज और जे.टी.चांड्क इन्होंने अर्थ की हुई वाणीजी रामद्वारा जलगाँव से लेके जाते और अपने वाणीजी का गुरु महाराज बताते वैसा पूरा आधार न लेते अपने मतसे,समजसे,अर्थ में आपस में बदल कर लेते तो ऐसा न करते वाणीजी ले गए हुए कोई भी संत ने आपस मे अर्थ में बदल नही करना है । कुछ भी बदल करना चाहते हो तो रामद्वारा जलगाँव से संपर्क करना बाद में बदल करना है ।

* बाणीजी हमसे जैसे चाहिए वैसी पुरी चेक नही हुअी,उसे बहुत समय लगता है। हम पुरा चेक करके फिरसे रीलोड करेंगे। इसे सालभर लगेगा। आपके समझनेके कामपुरता होवे इसलिए हमने बाणीजी पढनेके लिए लोड कर दी ।

।। अथ घट परचा को अंग लिखंते ।।

।। साखी ।।

सुखराम संत जन कहत हे ।। अजब अनोपंम बात ।।
बिन देख्या परचो कहे ।। सो नरक कुंड मे जात ।।१।।

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले सतस्वरुपी संतजन अजब अनुपम(जिसकी उपमा नहीं दी जाती)ऐसी बात कहते है। ये अनुपम बाते सुरत चक्षु से बिना देखे कहनेवाले नर्ककुंड में जायेगे। ।।१।।

याँ नेणाँ नहि देखिया ।। अजब अनोपंम चेन ।।
सुखराम सुरत सुं देख कर ।। अब भाकत हुँ बेण ।।२।।

जो अजब अनुपम चिन्ह दिखाई देते है वे चर्मचक्षु से दिखाई नहीं देते है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि ये चिन्ह मैं सूरत चक्षु से देखकर बोल रहा हुँ ।।२।।

नख चख री गत्त अेक हे ।। रूम रूम रट राम ।।
सुखराम कमाई आगली ।। अब नहि ऊल को काम ।।३।।

नाखून से लेकर आखों तक की गत एक सी है और रोम रोम से राम नाम की रटन होने लगती है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,रोम–रोम से राम नाम की रटन होना पूर्व की कमाई से ही होती है। इस बात के लिए आज की नयी कमाई काम नहीं देती है इसके लिए पूर्व की कमाई होनी ही चाहिए। पूर्व की कमाई नहीं है तो अब राम नाम की रटण करो। अभी का किया हुआ अगले जन्म में पूर्व की कमाई हो जायेगी। ।।३।।

शिवरण की सरदा नही ।। मुख सूं कहयो न जाय ।।
सुखराम दास दे मूण ज्यूं ।। पावन रहयो बजाय ।।४।।

सुमिरण करने की मेरी ताकद नहीं है और मुँह से राम नाम कह पाता नहीं। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,यह शरीर मुण के जैसी अपने आप बज रही है।(मुण मतलब बङा मटका,जिसमें अन्दाज से करीब पाच मण पानी आता है और उसका मुँह सिर्फ हाथ घुसेगा इतना ही होता है। ऐसे मिट्टी के बनाये हुए मटके को मूण कहते है। मारवाङ देश में दुर से पानी लाने के लिए गाडी में रख कर पानी लाते है उसे मूण कहते है)। यह मूण यदी खाली रही,तो हवा के वेग से जोर–जोर से बजती है। उसी तरह मेरा शरीर मूण के जैसा श्वास से बज रहा है। ।।४।।

मेरी मुज कूं गम नही ।। सुरत शब्द ले जाय ।।
सुखराम सुंन का सहर मे ।। अजब तमासा थाय ।।५।।

मुझे तो मेरी खबर नहीं है। यह सूरत ही शब्द को सुन्न शहर में लेकर जाती है। उस सुन्न के शहर में अजब प्रकार के तमाशे होते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।५।।

उडी गुडी असमान कूं ।। सुरत शबद की डोर ।।
सुखराम घटा बिन दामणी ।। ज्याहां अनहद बोले मोर ।।६।।

जिस प्रकार पतंग उड्कर आकाश में जाती है वैसे ही सूरत शब्द की रस्सी से उड्कर उपर जाती है। वहाँ बिना घटाओं के ही बिजली चमकती है और अनहद शब्द मोर के जैसा बोलता है। ।।६।।

सुखराम दास देह कींगरी ।। नाड़ भई सब तार ।।
राग छत्तिसुं ऊतरे ।। कोई गेब बजावण हार ।।७।।

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,यह शरीर तो वीणा हो गया और सभी नाडीयाँ वीणा के तार बन गये। इस शरीर रूपी वीणा और नाडी रूपी तारों से छत्तीस प्रकार के राग रागीनी निकलते है। इसे कोई अजनबी(गैबी)बजानेवाला है जिस कारण से इस शरीर से ध्वनी निकलती है। ।।७।।

अजब तमासा देखिया ।। तन भीतर मन मांय ।।
सुखराम जगत का ख्याल पर ।। अब मन जावे नाय ।।८।।

मैंने इस शरीर में निजमन से अजब प्रकार के तमाशे देखे है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है की,मैने शरीर में अजब प्रकार का तमाशे देखे है इसलिए अब इस संसार में कोई भी कैसा भी खेल तमाशा रहा तो भी देखने के लिए मन नहीं जाता। ।।८।।

जगत तमासे लग रही ।। आन मांय के संग ।।
सुखराम दास ज्याहाँ रम रहया ।। ज्याहाँ अनहद बाजे जंग ।।९।।

यह सारा संसार माया रूपी दूसरा तमाशा देखने में लगा हुआ है।(दूसरे मायारूपी चमत्कार देखने में लगे हुए है)परंतु आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,मैं तो वही रम गया हूँ जिस जगह पर अनहद जंग(जिंग शब्दकी)आवाज बज रही है।।९।।

नहि दीसे नहिं देख हूँ ।। रूप रंग कुछ नाँय ।।
सुखराम हात मे हात रे ।। युँ सबद लखाया मांय ।।१०।।

वहाँ कुछ भी दिखाई नहीं देता और मैं कुछ देखता भी नहीं हूँ। वहाँ रूप और रंग कुछ भी नहीं हैं। वहाँ तो घोर अंधेरे में हाथ में हाथ देकर जैसे मालूम होता है उसी प्रकार शरीर के अन्दर मुझे शब्द मालूम पडा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१०।।

सुरत हमारी माकड़ी ।। तार हमारा सांस ।।
मन पवना घर लाय कर ।। सुखदेव चडया आकास ।।११।।

यह हमारी सूरत तो मकडी है और मेरी श्वास मकडी के जाल का तार है(जैसे मकडी उस तार पर आती है–जाती है वैसे ही मेरी सूरत श्वास पर आती है–जाती है)। मेरी सुरत मन को पकडकर श्वास के आधार से आकाश में चढ गयी है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है। ।।११।।

पीठ फाड़ ऊँचा चडया ।। बंक नाळ निज मांय ।।
सुखराम धरम सूं जीत कर ।। त्रिवेणी मे न्हाय ।।१२।।

मैं पीठ के एक्कीस मणी को पार कर के उपर चढ गया। मैं बंकनाल से होकर उपर मेरू में चढकर और मेरू में धर्मराज(यमराज)को जीत कर त्रीवेणी(गंगा,यमुना,सरस्वती ये त्रिगुटी में मिलते है)वहाँ त्रिगुटी में जाकर स्नान किया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१२।।

ऊलटा अम्बर फाड़ कर ।। बस्या त्रिगुटी जाय ।।
सुखराम त्रिगुटी चेन रे ।। शब्दा मांय बताय ।।१३।।

मैं उलटा आकाश को फाड के त्रिगुटी में आकर रूका। इस त्रिगुटी का चरीत्र शब्दों में बताया जा सकता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१३।।

मन पवना आकास लग ।। सुरत शब्द घर अेक ।।
सुखराम त्रिगुटी पूंचिया ।। दे छिन मातर देख ।।१४।।

चारो मन,श्वास,सूरत और शब्द आकाश तक एक ही घर में आते है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,त्रिगुटी पहुँचने पर शरीर छिन मात्र दिखता है।।१४।।

आँक फिटकड़ी ऊघड़े ।। अतलस तेज लखाय ।।
ध्यान समो सुखरामजी ।। संत त्रिगुटी मांय ।।१५।।

आँख में यदी फिटकरी डाला जाय तो जैसा स्पष्ट दिखता है वैसे ही संतों को ध्यान के समय त्रिगुटी में मालूम पडता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१५।।

सुखराम लगे जब ध्यान रे ।। नेण ऊलटा थाय ।।
तीनु रस्ता अेक होय ।। दसवों द्वार लखाय ।।१६।।

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,जब ध्यान लगता है तो आँखे उलटी हो जाती है और तीनो रास्ते(इडा,पिंगडा और सुष्मणा)एक ही जगह हुयी ऐसा दशवेद्वार पर मालूम पडता है। ।।१६।।

सुखिया सायब भेटिया ।। त्रिवेणी की तीर ।।

शैंसर धारा सुषमणा || बूठा इमरत हीर ||१७||

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,त्रिवेणी में मुझे साहेब मिले वहाँ से सुष्मणा से होकर हजार दल के कमल पर पहुँचा। वहाँ सुष्मणा से अमृत की वर्षा होने लगी। जैसे हीरे की बारीष होती है,वैसे होने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ||१७||

अनहद ज्याँहाँ बाजा बजे || घर घर मंगलाचार ||
सुखिया आतम सुंदरी || ज्याँहा परमातम भरतार ||१८||

उस हजार पंखुडीयों के कमल में(ब्रम्हांड में)अनहद बाजे बजते है और घर-घर मंगलाचार होता है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,वहाँ तो आत्मा पत्नी है और परमात्मा आत्मा के पती है इस प्रकार पती-पत्नी का मिलाप हो गया। ||१८||

जोत जिला मिल होय रही || तेज पुंज मुख नूर ||
ज्यूँ ऊगा सुखरामजी || सेस कळा ले सूर ||१९||

वहाँ ज्योती का झिलमिल-झिलमिल बिजली के जैसा हो रहा है और मुख पर तेज:पुंज का प्रकाश झलक रहा है। जिस प्रकार हजार कलाओं को लेकर सूर्य उदित होता है उतना तेज दिखता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ||१९||

सुरत सुन्दरी मेहेल में || पाया पुरातम पीव ||
निकट सदा दूंरी नही || लग्या पीव सुंजीव ||२०||

इस सुरत सुंदरी को महल में(ब्रम्हांड),अपना पहला प्रथम पूर्व का पती मिला। उस पती से ऐसा जीव लगा की हमेशा उसके पास ही(सूरत)रहती है। उसके पास से दूर होती नहीं है। इसप्रकार सूरत शब्द से लग गयी वह शब्द से थोडी भी दूर नहीं जाती है। ||२०||

रूप रेख नहि बरण हे || ना कोई बेर न बात ||
सुरत रमे सुखरामजी || आठ पोहोर पिव साथ ||२१||

उसकी रूप-रेखा नहीं है और रंग भी नहीं है,बैन(वचन)ही नहीं और बात भी नहीं, शब्द पती से सूरत पत्नी आठोप्रहर,दिन-रात लगी हुयी रहती है। इस प्रीत से ही सूरत(पत्नी)आठो प्रहर खेलती रहती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ||२१||

आकास मंड कूं चूर कर || लिया सुनं गढ जाय ||
निरभे नेजा रोपिया || सुखदेव काळ न खाय ||२२||

मैं आकाश मंडल को पार कर आगे शुन्य गढ में पहुँचा। वहाँ सुन्न गढ में जाकर

निर्भय निशान लगा दिया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,उस देश में काल किसी को खाता नहीं है। ।।२२।।

बिन सूरज का तेज हे ।। बिन चंदे प्रकाश ।।
बिन बादळ सुखरामजी ।। बरसे बारू मास ।।२३।।

उस देश में चंद्र सुरज के बिना सुर्य का तेज है और चंद्रमा के बिना उजाला है और वहाँ बादल के बिना ही बारहो महीने वर्षा होती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।२३।।

बिन पाणी का रंग हे ।। बिन धरती आंकूर ।।
ज्याँ देख्यां सुखरामजी ।। ब्रम्ह जीव का मूर ।।२४।।

वहाँ बिना पानी का पानी सरीखा रंग है और जमीन के बिना बिज अंकुरीत होते है। उस जगह ब्रम्ह यह जीव की मुळ है। इस जीव की जड जो ब्रम्ह है उसको मैंने वहाँ देखा। ।।२४।।

बिन तरवर बोहो फूल हे ।। बिन फूलां निज बास ।।
बिन भंवरे सुखरामजी ।। लेवे सुख बिलास ।।२५।।

वहाँ पेड तो नहीं है लेकिन फूल बहुत से है और फूलो के बिना ही खुशबू चलती है। वहाँ भंवरा भी नहीं है परंतु उस(फूल की खुशबू)का सुख बिलास प्राप्त करता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।२५।।

धरण गिगन दोन्युँ नहिं ।। नहिं चंदा नहिं सूर ।।
ज्याँ देख्या सुखरामजी ।। अलख पुरूष का नूर ।।२६।।

वहाँ पृथ्वी नहीं है और आकाश भी नहीं है। ये दोनो नहीं है और चंद्रमा भी नहीं है तथा सुर्य भी नहीं है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि मैं उस जगह अलख पुरूष का नूर देखा। ।।२६।।

बेद गाय पूगे नहीं ।। नहि किरिया कर जाय ।।
रंरकार की डोर सूं ।। सुखदेव मांय मिलाय ।।२७।।

उस जगह पर वेदों का पाठ करके कोई भी नहीं जा सकता। वेदो की क्रियायें भी करके नहीं पहुँचा जा सकता है। वहाँ सिर्फ ररंकार शब्द की डोर से उपर चढकर उसमें मिला जा सकता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।२७।।

तपस्या कर कर खप गया ।। तीरथ कर नर लोय ।।
बिना भजन सुखरामजी ।। कदे न पूँथे कोय ।।२८।।

कितने ही वहाँ जाने के लिए तपश्या कर–कर के थक गये लेकिन कोई भी तपश्या करके या तीर्थ करके वहाँ पहुँचा नहीं। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि

,राम नाम का भजन करने के बिना वहाँ कोई भी कभी भी नहीं जा सकता। ।।२८।।

बरत वास एकादसी ।। करता हे निरधार ।।
बिना भजन सुखरामजी ।। कदे न पूंथण हार ।।२९।।

कोई वहाँ जाने के लिए व्रत करो,एकादशी करो,निर्धार करो परंतु आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि राम नाम का भजन किए बिना वहाँ कभी भी पहुँचने वाले नहीं। ।।२९।।

दान पुण्य जिग बोहो कीया ।। कंचन तुळा चढाय ।।
बिना भजन सुखराम के ।। धाम कदे नहि जाय ।।३०।।

वहाँ जाने के लिए दान पुण्य बहुत किए और यज्ञ भी बहुत किए और अपने बराबर सोना तौलकर तुला दान दिया परंतु राम नाम के भजन किए बिना उस धाम में कभी भी कोई भी जानेवाला नहीं है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।३०।।

रेखता ।।

आकास सुं पंच पँयाळ कूं ऊतऱ्यां ।। चोकियां च्यार बिश्राम पाया ।।
पाँच पच्चिस दिन नाँव रसणा लिया ।। हिरदे मांस हर अेक गाया ।।
नाभ के बीच मे जुग सो रम रहयो ।। गुरा के भेद पाताळ आया ।।
मूळ दवार मे गंम अेसे पड़ी ।। पावन के फेर कोई भंवर खाया ।।
नाड़ चोबीस का बंद अेके लग्या ।। उथे जालंदरी बंध लाया ।।
धरण आकास मद होत झणकार रे ।। थाळ कूं छेड़ कोई देत भाया ।।
भेद की बात निज फेर अेसे कहुँ ।। मूण में भंवर कोई गीत लाया ।।
पाँव हर पंख बिन चलत आकास कूं ।। पिछम के देस का भेद पाया ।।
पिछम के देस का सूत ओया लग्या ।। कूंप मे कुंभ कोई सीच ल्याया ।।
मेर के ऊपरे बंद बोहो भाँत का ।। धरण सूं जीत आकास आया ।।
अळा हर पिंगळा दोय काने लगी ।। त्रिबेणी घाट मे आण न्हाया ।।
मद सूं सुखमणा आण भेळी हुई ।। चंद हर सूर घर अेक ल्याया ।।
अरद अर ऊरद ज्याहाँ कंवळ दोय फूलिया । सबद की घोर गिरनार छाया
दास सुखराम गुरू देव प्रताप सुं ।। गढ पर चढ निसाण बायाँ ।।१।।

आकाश से पाँच( )पाताल में उतरा और चार चौकी कंठ,हृदय,कमल,नाभी,मध्य पर विश्राम( )मिला। एक महिने तक जीभ से राम नाम लिया तब शब्द कंठ में आया और एक महिना कंठ में रहकर शब्द हृदय में आया। हृदय में एक महीना खुब भजन किया। वहाँ से शब्द नाभी में आया)। नाभी में बारा बरस तक रहा और बारह वर्ष के बाद गुरू ने भेद दिया। गुरू के भेद से नीचे पाताल में आया। वहाँ से गुदा घाट

पर मुझे ऐसा मालूम पडा जैसे हवा का भंवर चलने लगा।(चक्कर लगाने लगा)। चौबीसों नाडीया का एक बंद लगा,उस जगह पर एक जालंधरी नाम का बंध लगा। वहाँ धरणी से आकाश याने मेरू तक झनकार होने लगी। जैसे वीणा के तार को यदी नीचे धक्का दो तो उपर खूंटी तक झनकार शब्द निकलता है उसी प्रकार बंकनाल के मुँख से मेरू तक झनकार होने लगी। फूल की थाली को धक्का लगने पर जैसा शब्द निकलता है वैसी झनकार होने लगी। मैं अपने निज भेद की बात अधिक बताता हूँ। जैसे मूण बजती है वैसे झनकार होने लगी। मूण खाली पडी और हवा के वेग से जोरों से बजने लगती है और बहुत से भवरे मिल कर गुंजार करते है ऐसी सभी भवरों की ध्वनी मिल कर एक ध्वनी मालूम पडती है और स्त्रीयाँ बहुत सी मिल कर गाने गाती है उन सबका एक ही राग हो जाता है इस प्रकार इन सभी नाडीयों की मिल कर एक ही ध्वनी होने लगी। पैर भी नहीं और पंख भी नहीं। बिना पैर के और पंख के चलते हुए आकाश तक जाते। पश्चिम देश का(बंकनाल से मेरू)तक का भेद मुझे मिला। पश्चिम के देश में ऐसा तार मिला कि जैसे कूए में गागर डालकर पानी भरकर उपर खिचते है उसी प्रकार शब्द उपर चढ गया। मेरू के उपर अनेको तरह के बंद है। वह बंद तोड के धर्मराज को जीतकर आकाश में आया। मेरू से इडा एवम् पिंगडा ये दोनो तरफ दोनो चलने लगी। ये दोनो त्रिवेणी के घाट पर आयी। वहाँ त्रिगुटी मे(इडा और पिंगला)में स्नान किया।(इडा और पिंगला)इन दोनो के बीच में सुष्मणा आकर मिली। चंद्र और सूर्य ये दोनो एक ही घर में आ गये। इडा और पिंगला की सुष्मणा बन गयी। नीचे और उपर वहाँ दो कमल खिले,यह शब्द ध्वनी उपर ब्रम्हांड में जाकर फैल गयी। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,गुरूदेव के प्रताप से गढ के उपर चढकर निशान फेका। ।।१।।

नाभ रसणा बिचे अेक धारा लगी ।। गध गधे कंठ अलेख ध्यावे ।।
अरट आकास मे रात दिन बेहे रहयो ।। बेल पाताळ कूं नीर जावे ।।
सास ऊसास के बिच बारा ढुळे ।। रूमहि रूम संभाळ पावे ।।
गुरदेव प्रताप के भेद कर उलटिया ।। पिछम के देस आकास आवे ।।
सबद का भेद कोई संत जन जाणसी ।। मुगत की राह दिल खोज पावे ।।
दास सुखराम ज्यां रीत निरभे बणी ।। पूंछिया संत जिण गेल ध्यावे ।।२।।

नाभी और जीभ के बीच एक जैसी धार लग गयी। कंठ गद-गद होकर जैसे पानी का रहाट चलता है,वह रहाट कुँए से पानी लाकर उपर छोडता है,इस प्रकार रात-दिन उपर आकाश में शब्द पानी के रहाट जैसा चढने लगा। बेल(दांड)पाताल में पानी जाता है। श्वासोश्वास के बीच प्रत्येक श्वांस में जैसे पानी की मोट आकर ढुलती वैसे

आकर ढुलने लगी। जैसे रहाट का या मोट का पानी क्यँरियो से पौधो को देते है उसी प्रकार यह रोम रोम में होने लगा। गुरूदेव के प्रताप से और गुरूदेव के दिए हुए भेद से उलटकर पश्चिम के देश से(बंकनाल के रास्ते से होकर)आकाश में आया। इस शब्द का भेद कोई संत जनही जानेगा। सतस्वरुप मुक्ती का रास्ता जीस संतका मन खोजेगा उसीको ही वह रास्ता मिलेगा। आदि सत्गुरू सुखरामजी महाराज कहते है जो संत इस रास्ते से जाते वही संत वहाँ पहुँचते। ।।२।।

सास ऊंसास के बीच बारा ढुळे ।। प्रेम की डोर ज्याहाँ लहर आवे ।।
प्याळ का बन कूं पाय जन उलटिया ।। सुंन को बाड़िया जाय पावे ।।
मेघ बिन मेघ ज्याँ घटा बिन दामणी ।। गाज बिन गाज घणघोर लाय ।।
नीर बिन बाग ज्याहाँ फूल बिन फूलिया ।। बप बिन भंवर गुंजार गाया ।।
सुंन की बाड़िया पाय निरभे हुवा ।। फूल फुल बाद की बास आवे ।।
दास सुख राम उण बाग मे रम रहया ।। अमर पद बेल का फळ खावे ।।३।।

पानी से भरी हुयी मोट उपर आकर ढुलती है इस प्रकार प्रत्येक श्वास में शब्द उपर आकर मोट के जैसा गिरता है। प्रेम की डोर से सुख की लहरा आती है। पाताल के वनों को पानी देकर मैं बंकनाल के रास्ते से उलट गया और वहाँ से ब्रम्हांड की क्यरीयों को पानी दिया। वहाँ बादल और घटाओं के बिना बिजली चमकती है और वहाँ गर्जना होती नहीं है परंतु सुनाई देती है और वहाँ घनघोर घटा छाती है और वहाँ पानी के बिना बगीचे और फूल खिले है फूल और शरीर के बिना भंवर(शब्द)गुँजार करता है। शब्द को शरीर तो नहीं है परंतु उपर ब्रम्हाण्ड में जाकर ध्वनी करता है। उस ब्रम्हांड की क्यरियों में पानी देकर मैं निर्भय हो गया। वहाँ फूलों के बगीचे की सुगंधी आती है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है की,उस बगीचे में राम रमन कर रहे है। वहाँ लताओंको लगे अमर पद यह फल खाते है। ।।३।।

अरद अर उरद के बीच गुडिया उडी ।। सुरत अर निरत की डोर लागी ।।
सास उसास सुं जाय उँची चड़ी ।। सुंन मे जाय झणकार बागी ।।
सुंन का सहर मे गेब का मेहेल हे ।। पूंथ सी संत सुजाण पागी ।।
बेद कतेब गुण गाय पूगे नहि ।। सुरत पर जीण कर संत गाजी ।।
अगम वो देश ज्याँ निगम कुं गम नहिं ।। भरम भूला फिरे मिसर काजी ।।
दास सुखराम ज्याँ सुन निराकार हे ।। देह बिन देह ज्यां परसणाजी ।।४।।

अर्थ और उर्ध(नीचे और उपर आते-जाते श्वास के बीच)पतंग उडी। उस शब्द रूपी पतंग को सूरत और नीरत की डोर लग गयी। वह पतंग(शब्द)श्वास श्वास पे जाकर उपर चढ गयी। वह शब्द ब्रम्हांड में चढकर ऐसी झंकार करने लगा जैसे फूल की

थाली धक्का लगने पर बज उठती है। उस सुन्न के शहर में गैबका महल है। यह पागी सरीखी जानकारी रखनेवाले सतस्वरुप के जानकार संतही सुन्न के महल में पहुँचते है। वहाँ वेद भी नहीं पहुँचता और कुरान भी नहीं जाता तो वेदों के गुण गानेवाले हिंदू और कुरानों के गुण गानेवाले मुसलमान ये कैसे वहाँ पहुँचेगे। वेद और कुरान ये खुद नहीं पहुँचते,यानी वेद का कर्ता ब्रम्हा और कुराण का कर्ता मुहम्मद ये खुद वहाँ नहीं पहुँचते तो वेद और कुरानों के गुण गानेवाले कैसे पहुँचेगे। वहाँ तो जाने का घोडा सूरत है। इस सूरत रूपी घोडे पर जीन कसकर सवारी की वही संत वहाँ पहुँचे है। वह देश अगम है। उस देश की निगम(वेद को भी)गम याने जानकारी नहीं है। ये मिसर, पंडित और काजी सभी भ्रम में भूले हुए है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,वह सुन्न निराकर है। वहाँ शरीर के बिना देव है,उन्हें शरीर के बिना जाकर परसो। ।।४।।

सुरत अब जाय असमान मे घर कियो ।। सबत सुं मनवाँ जाय लागा ।।
रात अर दिवस मे पलक नहि बीछडे ।। सुंन का सहर मे तूर बागा ।।
राग मे राग बोहो माँत ज्याहाँ नीसरे ।। कामण्या अनंत मिल गीत गावे ।।
सुख संमाद मे पीवजी पोढिया ।। सुंदरी सुरत ज्याहाँ खबर ल्यावे ।।
पीव का आण बखाण बोहो भाँत कर ।। आन की बात नहि चित्त माने ।।
पीव का पत में अंत गाडी रहे ।। सरब सेंसार कूं खाक जाणे ।।
बोहोत दिन जुग सूं बिछडया होय गया ।। स्याम सूं प्रीत कर प्रेम पीया ।।
दास सुखराम जब जाय दरगाँ मिल्या ।। पीवजी कंठ लगाय लीया ।।५।।

सुरत ने आसमान में घर किया। वहाँ आसमान में शब्द से मन लग गया। अब ये तीनों(सूरत,शब्द और मन)रात-दिन एक पल भी,एक दूसरे से अलग होते नहीं है। उस सुन्न के शहर में मुंह से फूंक मारकर बजानेवाले बाजे समान तूर बाजा बजने लगे। वहाँ अनेक प्रकार की राग रागिनीयाँ निकलती है और शरीर को अनेको नाडीया रूपी पत्नी मिलकर गाने गाती। उस सुख समाधी में पती मालक आराम करने लगे। सुंदरी सूरत वहाँ जाकर खबर लाती है और मालिक का वर्णन अनेक प्रकार से करती है और दूसरे की बात करना या सुनना यह चित्त में मानती नहीं। मालिक पर विश्वास बहुत ही मजबूत रहता है और दूसरे पूरे विश्व को राख के समान जानती है। उस मालक से अलग हुए बहुत युगों के युग व्यतीत हो गये। उस स्वामी से प्रिती से प्रेम पीया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि जब मैं दरगाह में जाकर मालिक से मिला तब मालिक ने मुझे गले लगा लिया। ।।५।।

रमता राम सूं हेत हम बांधियो ।। बोलता राम सूं प्रीत कीनी ।।

देह आकार का नाँव सब परहऱ्या ।। अरद अर उरद बिच सुरत दीनी ।।
पांच पच्चीस सुं राम न्यारा रहे ।। दिष्ट अर मुष्ट मे नहि आवे ।।
धरण पाताळ असमान सूं अगम हे ।। क्रोड़ मध संत कोई गम पावे ।।
पुरणा राम भर पूर सो भर रहया ।। जाय ब्रहमंड रंरकार ध्याऊँ ।।
दास सुखराम के शब्द अरूप हे ।। जिंग सी धुन सुं राम गाऊँ ।।६।।

रमता राम(जो सर्वत्र रमन कर रहा है)उस राम से मैंने जाकर दोस्ती की और बोलते राम से प्रीति की। जिसने शरीर धारण करके आकार धारण किया है ऐसे अवतारो के और देवताओं के नाम लेने दूर कर दिये। अर्थ और उर्ध(नीचे उपर जाने–आने की श्वास में)में सूरत लगा दी है। वह राम पाँच तत्वों से भी अलग है और पच्चीस (प्रकृती)से भी अलग है। वह राम आँखो से नहीं दिखता है। वह मुट्ठी से पकडा नहीं जाता है। वह राम पृथ्वी पर भी नहीं है और पाताल में भी नहीं है और आकाश से भी अगम है। उस राम की गम सौ लाख संतो में कोई एक आध को ही है। वह पूर्ण राम सर्वत्र भरपूर भर रहा है। वह सर्व व्यापी है। मैं ब्रम्हांड में जाकर ररंकार शब्द का ध्यान करता हूँ। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि शब्द अरूपी है,उस शब्द को रूप नहीं है। उस(जींग)शब्द की ध्वनी से मैं राम नाम गाता हूँ ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।६।।

चंद अर सूर घर कुण अस्तान हे ।। धरण ब्रहमंड काहाँ वाय ऊँठे ।।
मन अर बुध्द अहंकार संग सुरत रे ।। काहाँ लग दोड घर कोण छूटे ।।
आद अस्तान घर कूण हे हंस को ।। जीव की जुगत काहाँ बास होई ।।
अरद अर उरद सो कोण घर ऊपड़े ।। तत्त का भेद घर जाण कोई ।।
सगत अर शिव काहाँ बिस्न भगवान हे । सात सर मांहि काहाँ सेज सेवा ।
कूण अस्तान घर बिष का बास हे ।। कोण घर बसत सो मिष्ट मेवा ।।७।।

इस चंद्रमा और सूर्य का घर किस स्थान पर है। धरण का स्थान कहाँ है और ब्रम्हांड वायू कहाँ से उठती है। मन और बुध्दि और अहंकार इनके साथ सूरत की दौड कहाँ तक है। ये कौन से घर से चलते है। हंस का आदी स्थान कौनसा है और इस जीव की मुक्ती और इस जीव का रहने का स्थान कौनसा है और अर्थ और उर्ध(नीचे उपर आती जाती श्वास)। किस घर से निकलती है और तत्त के घर का भेद किसने जाना। शक्ती और शिवब्रम्ह कहाँ है और विष्णू भगवान कहाँ है। सात समुद्र में विष्णु की सेज कहाँ है। विष के रहने का स्थान कहाँ है और मिष्टान्न और मेवा कहाँ होता है। ।।७।।

सुध्द अर बुध्द गणेष घर कूण हे ।। सुरग इकीस काहाँ इंद्र राजा ।।

सरसती साच सम राग घर कोण हे । अखंड घचन घोर काहाँ बजे बाजा ।
भार अठार घर कूण से ऊपजे ।। नेम सो नाम घर कूण मांही ।।
सिलतां सेंग कुण माय सूं नीसरे ।। बहेत जल नीर कुण समद जाई ।।
प्राण का पाव काहाँ गेल बिस्तार हे ।। कोण घर ठाम ज्याहाँ जोत जागे ।।
हद घर कोण बेहद की बात के ।। वाहाँ हंस जाय जब कोण सागे ।।
जोत के ऊपरे कूण अस्थान हे ।। लोग सो लोय के राज होई ।।
दास सुखराम निर बाण निज ब्रम्ह को ।। भेद अस्थान को देत मोई ।।८।।

सुद्धि(समझ)और बुद्धि किस घर को रहते है और गणपती का घर कौन सा है और इक्कीस स्वर्ग कहाँ है और देवताओं का राजा इंद्र कहाँ रहता है। यह सरस्वती कहाँ है। सत्य कहाँ है और राग रागिनी का घर कहाँ है और यह अखंड घनघोर बाजा कहाँ बजता है और ये अठाराह वनस्पती किस घर से उत्पन्न होती है। नियम और नाम किस घर में है और ये सभी नदियाँ(नाडीयाँ)किसमें से निकलती है। और इनका पानी बहते–बहते कौनसे समुद्र में जाता है और इस प्राण के पैर और रास्ते का विस्तार कहाँ है। ज्योती जागृत होती है उसका घर और ठिकाणा कहाँ है। हद का घर कहाँ तक है और बेहद का घर कहाँ है बताओ। वहाँ बेहद में हंस जाता है तो उसके साथ कौन रहता है और ज्योती के उपर कौनसा स्थान है। कौनसे लोक और कौनसे लोगों का राज्य है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है की,उस निर्वाण निजब्रम्ह के स्थान का भेद मुझे कोई देगा क्या?।।८।।

अळा घर चंद अर रवि घर पिंगळा ।। खंड नव मेर के आस पासा ।।
पवन की पोट ब्रहमंड सूं ऊतरे ।। धरण तिहुँ लोक मे बंदी आसा ।।
हंस की जाग घर हद हे त्रिगुटी ।। जीव को बास ओ कंठ मांही ।।
अरद अर ऊरद घर नाभ सूं ऊपड़े ।। तत्त घर भेद ब्रहमंड क्राई ।।
सगत अस्थान घर त्रिगुटी ऊपरे ।। बिसन भगवान घर नाभ बासा ।।
मन अर बुध्द अहंकार सो सिवजी ।। हिरदे अस्थान जो सरब आसा ।।
त्रिवेणी सहर घर स्याम सुख सेव हे ।। भृगुटी सीस घर बिष होई ।।
निगम निज नाँव सो मन घर माय हे । अरद अर ऊरद ज्याहाँ मिले दोई ।
कंवळ खट पाँखडी ब्रम्हा अस्तान हे ।। सुरग इकीस सुंमेर माँही ।।
सुरसती साच अस्तान दिल ऊपरे ।। राग घर कंठ को कंवल जांही ।।
भार अठार कण नाड़ मे ऊपजे ।। नेम सो नाम घर प्रेम कहिये ।।
प्राण का पाव परमोद निज ग्यान हे ।। अरद अर ऊरद बिच बास रहिये ।।
सिलता सेंग मथासरो नांभ हे ।। पवन जल अंस सो बहुत मांही ।।

सिलता पाँच मिल जात हे समंद मे ।। दोय बत्तीस ज्याँ तीन जांही ।।
सात सर मांय सो जात चोबीस ही ।। ओर निंनाणवे बीच भेळा ।।
आद घर खोज ज्याँ जोत प्रकाश हे ।। तीन गुण पाँच ज्याँ होत भेळा ।।
जोत के ऊपरे नव अस्तान है ।। राज गत बिध सो नाम जूवा ।।
नास का नाभ बिच हद अस्तान है ।। त्रिगुटी लंघ बेहद हूवा ।।
दसवे द्वार कूं खोल मुगता सहे ।। हद बेहद सब रहत लारा ।।
गुदा घर कंवळ गणपत का बास हे ।। नगर अमरावती इंद्र राजा ।।
सुखमण थान घर मिष्ट मेवा खुले ।। गिगन घर बजे घोर अखंड बाजा ।।
दास सुखराम निरबाण निज ब्रम्ह कूं । सुंन का सहर मे परश प्यारा ।।९।।

इडा के घर चंद्र और पिंगडा के घर सूर्य और ये नव खंड मेरू के आसपास है। यह हवा की गठडी ब्रम्हांड से उतरती है यानी धरती और तीनो लोक मे आशा बंधती है। हंस का घर(आदी घर)त्रिगुटी(भृगुटी)है जीव के रहने का स्थान कंठ है। अर्थ व उर्ध(आती जाती श्वास)नाभी के पास से उठती है। तत्त का भेद और घर ब्रम्हाण्ड है और शक्ती का घर त्रिगुटी के उपर है और विष्णु का घर नाभी याने विष्णु नाभी में रहता है। मन,बुद्धि और अहंकार और शिवजी ये सब हृदय में रहते है। त्रिवेणी के शहर में,त्रिवेणी के घर स्वामी की सुख सेज है। भृगुटी के घर विष है। निगम का निजनाम मन के घर में है,अर्ध और उर्ध जहाँ दोनो मिलते है। छः पंखुडी का कमल में ब्रम्हा का स्थान है(लिंग स्थान),यहाँ से ब्रम्हा सर्व सृष्टी की रचना करता है। एक्कीस स्वर्ग सुमेरू(मेरूदण्ड)में है। सरस्वती का स्थान दिल(मन के)उपर है। सत्य का स्थान दिल है,राग रागिनी का स्थान कंठ कमल है। यहाँ राग रागिनी का स्थान है। अठाराह भार वनस्पती के कण नाडीयों से उत्पन्न होते है। नियम और नाम इनका घर प्रेम है।(प्रेम रहा तो नियम रहता और प्रेम ही रहा तो नाम लिया जाता है।)प्राण का पैर निज ज्ञान का उपदेश है। अर्थ और उर्ध(श्वास)में प्राण रहता है और सभी नदियाँ(नाडीयों)का उगम नाभी से है। पवन के(श्वास के)योग से पानी का अंश,नाडीयों में श्वास के जोर से बहता रहता है। वह पूरे शरीर में पहुँचता है। इसमे से पाँच नाडी जाकर समुद्र में मिलती है। उसमें दो नाडी और तीन नाडी और बत्तीस नाडीया जाती है और अधिक निन्यानवे नाडी बीचमें से मिलती है और आदि घर में ज्योती का प्रकाश है। वहाँ तीन गुण(रज,तम,सत्)और पाँच विषय का मेल ज्योती के घर होता है। इस ज्योती के उपर नव स्थान है। राज गती तथा विधी से इन नवो स्थानों का नाम अलग अलग है। नासीका और नाभी में हद स्थान है और त्रिगुटी का उल्लंघन किया यानी बेहद है और दसवाँद्वार खुला यानी सतस्वरुप मुक्ती है। दसवाँद्वार खुला यानी हद और बेहद्द

ये सभी पीछे रह जाते है। गुदा घाट पर जो कमल है वहाँ गणपती रहता है और इक्कीस स्वर्ग में अमरावती नगर है वहाँ इंद्र राजा होता है। सुष्मना का जहाँ ध्यान लगता है वहाँ मिष्ट मेवा खुलता है। गगन घर में घोर अखंड बाजा बजता है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले,मैंने निर्वाण निज ब्रम्ह को सुन्न के शहर में पाया, वह प्यारा है। ।।९।।

किरोध की दोड़ सुमेर आकाश लग ।। मन की पूंछ सो हद मांही ।।
सुरत सो जाय बेहद के टापरे ।। अगम अस्तान ज्याहाँ संत जाई ।।
आवतां हंस की संखणी नाळ हे ।। उलट घर जावतां बंक होई ।।
भंवर गुफास में आद अस्तान हे ।। संख अर बंक ज्याँ मिले दोई ।।
बीच मे पट सो जाल उन मान हे ।। भृगुटी त्रिगुटी दोय कुवावे ।।
संखणी नाळ होय जोग अस्तान ले ।। बंक सी मांहि होय ब्रम्ह पावे ।।
जोग के साजिया देह जुग राख ले ।। काळ के बस जन जाय होई ।।
दास सुखराम कहे भक्त इदकार यूँ । जनम अर मरण जो मिटे दोई ।।१०।।

क्रोध की दौड सुमेर तक याने आकाश तक है मन की पहुँच हद के अन्दर है हदके याने भृगुटी के परे मन की पहुँच नहीं है और सूरत बेहद तक जाती है परंतु हद और बेहद के परे अगम स्थान में संत जाते है। जहाँ संत जाकर पहुँचते है वह अगम स्थान है। वहाँ मन और सूरत नहीं पहुँच सकती है। हंस भृगुटी से आता है वह संखनाल है ।(हंस भृगुटी से संखनाल से आकर गर्भ में पडता है)और पलटकर घर जाते समय बंकनालके मार्ग से जाता है। भवंर गुफा में(भृगुटी में)आदी स्थान है। उस जगहपर संखनाल और बंकनाल दोनो आकर मिलते है। दोनो नाडीयोके बीच में परदा है। वह पड्दा एकदम ही पतला जाली जैसा है। बीच में परदा रहने के कारण दोनो नाल को भृगुटी और त्रिगुटी ऐसे दो नाल कहते है। संखनाल के रास्ते से योगाभ्यास करके मूलद्वार से(गुदा घाट से)होकर भृगुटी के स्थान जाकर पहुँचते है। ब्रम्हा स्थान,नाभी, ह्रदय,कंठ से होकर जाने से जीव जहाँसे आया वह(जीव)ब्रम्ह मिलता है। योग की साधना करके शरीर को संसार में रखा जा सकता है।(योगाभ्यास से श्वास चढाते है यानी श्वास बडी हो जाती है। उस योग से उमर बढकर शरीर संसार में रह जाता है)। परंतु कभी ना कभी वे जन जाकर काल के वश होते है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है। सतस्वरुपी भक्त का जन्म और मरण दोनो मिट जाता है यह सतस्वरुपी भक्त का अधिकार है ।।१०।।

ब्रम्ह के देश की गेल बोहो कठण हे ।। बीच अेक बीस जो च्यार घाटा ।।
पांच पचीस सो पेड़ियाँ पडत हे ।। अद बिच रहा सो तीन फांटा ।।

दस सो संमद उण गेल के बीच हे ।। दोय ज्युँ साम के देश मांही ।।
बिच मे पाहाड़ तां मांहि झक रेहत हे ।। जम के शीस होय गेल जाई ।।
तीन ठग दोय सो न्हार बन बीच हे ।। बैसिया सात सुण दोय दूता ।।
दास सुखराम कहे सरब अे जीतियां । तां दिना आद घर जाय पूंथा ।।११।।

सतस्वरुप ब्रम्ह के देश का रास्ता बहुत ही कठीन है। उस रास्ते में एक्कीस स्वर्ग (मेरू दण्ड के)और अधिक चार घाट है। अधिक पाँच और पच्चीस उपर चढने के लिए सीढीयाँ पडती है। बीच में से तीन रास्ते निकलते है। इन रास्तों में दस समुद्र है और दो समुद्र स्वामी के देश में है। बीच में मेरू पर्वत है उस पहाड पर यक्ष रहता है। यह रास्ता यम के देश में,यम के सिर पर पैर रख कर जाता है। रास्ते में तीन ठक( ) और वनो में दो वाघ( )है और उसमें सात वेश्या( )है और दो दुत्या( )है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि जीस दिन जो संत इन सबको जीतेगा उस दिन वह संत सतस्वरुप के आदी घर पर पहुँचेगा। ।।११।।

छाड़ संसार का काम किल्यान सो ।। आठ हि पोहर हम नाँव लीया ।।
सास उसास की धवण घट लाय के ।। करम सो छाड़ कर प्रेम पीया ।।
उड के मोर पाताळ मे पेठग्यो ।। सेस कूं पकड़ पलटाय लीयो ।।
जाय आकाश असमान सुं ऊपरे ।। तां दिना सरप कूं छोड़ दीयो ।।
नाद अनाद घर सुंन मे सांभळ्यो ।। मोर मे मंत होय बोल बाणी ।।
दास सुखराम के त्रिगुटी छाडीये ।। ता दिना गुरड़ ही थके प्राणी ।।१२।।

मैंने संसार के कल्याण के सभी काम छोड दिये और मैंने रात–दिन आठो प्रहर नाम स्मरण किया। श्वासोश्वास की धौकनी(लोहार की भाथी जैसे धौकनी देती है)इस प्रकार घट में धौकनी लगा दी और सभी कर्म फल की आशा छोडकर प्रेम का प्याला पिया। मोर उडकर पाताल में धस गया और वहाँ पाताल में शेष को पकडकर पलटा दिया फिर मैं आकाश याने आसमान के ही उपर पहुँचा। उस दिन पकडे हुए सर्प को छोड दिया। नाद और अनाद के घर जाकर सुन्न में नाद सुना। वहाँ मोर मदोनमस्त होकर बोल रहा था। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले जिस दिन त्रिगुटी छोड उस दिन गरूड याने प्राणी भी थक जाता है। ।।१२।।

देह बिन देव आकार बिन मूरती ।। नेण बिन पाव हम जाय देख्या ।।
आठ ही पोहर मे अंखड दीदार हे ।। त्रिगुटी सहर मे जाय पेख्या ।।
केण मे सोभ बरणाव किम कीजिये ।। भेद करतार को बोहोत भारी ।।
मन सो सुरत जब जाय हर देखिया ।। छाड़ दी भर्म की रीत सारी ।।
होय निसंक सेसांर मे बिचारिया ।। राम बिन आन सो नाहि सुवावे ।।

दास सुखराम कहे चित्त बिन सुरत रे । जीव बिन साम निरधार गावे ।।१३।।

वहाँ जाकर बिना देह का देव देखा और बिना आकार की मूर्ती देखी। मेरी आँखे और मेरे पैरो के बिना वहाँ जाकर मैंने देव और मुर्ति देखी। वहाँ देव और मुर्ति के दिन रात आठोप्रहर अखण्ड दर्शन है। उस देव को,उस मुर्ति को मैं त्रिगुटी में जाकर देखा। उसकी शोभा का वर्णन मैं कैसे करू?उस कर्तार का भेद भारी है और मन और सूरत ने जब हर को देखा। तब से मैंने भ्रम की सभी रीती छोड दी और मैं निसंक होकर संसार में रमणे लगा। मुझे राम के नाम के बिना दूसरा कुछ भी अच्छा नहीं लगता। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले,मैं चित्त,सूरत और जीव के बिना स्वामी को बिना आधार के गाने लगा। ।।१३।।

बंद जालंदरी नाभ मे लागियो ।। पीठ के देश उत्तान पाता ।।
त्रिगुटी मांहि सो ताटकी बंद हे ।। ध्यान की अब सो कहत गाथा ।।
रेचकी ध्यान मे मन सो नास का ।। पुरकि ध्यान में चख बिचा ।।
तीसरो ध्यान कुंभक तब लागियो ।। प्राण सो चालियो सुरग उँचा ।।
अेक संमाद तो सेज की रेत हे ।। सुरत अर शब्द के गाँठ लागी ।।
दास सुखराम क्हे दूसरी तब लगे ।। तां दिन सुध्द नी पवन त्यागी ।।१४।।

जालंदरी बंद नाभी में लगा,पीठ के देश में उत्तानपात बंद लगा और त्रिगुटी में त्राटकी बंद लगा। ध्यान की कथा अब मैं कहता हूँ। रेचक याने घटसे श्वास बाहर निकालना ऐसे करने के लिए मन और नासीका से काम लो। पूरक याने घटमें श्वास भरना ऐसा ध्यान करने के लिए आंखो से काम लो और तीसरा कुंभक याने घट में नाभी में श्वास भरके रखना है। ऐसे कुंभक का ध्यान जब लगता तब यह प्राण इक्कीस स्वर्ग के उपर चला जाता है। कुंभक करने पर श्वास बाहर न निकलने से प्राण इक्कीस स्वर्ग से होकर उपर चढ जाता है। एक समाधी तो सहज की होती है उसे सहज समाधी कहते है। इस सहज समाधी से सूरत और शब्द का मेल होता है। उसे सहज समाधी कहते है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,दूसरी समाधी जब लगती उस दिन सुद्धि नहीं रहती है और श्वास याने पवन भी त्यागे जाता। ।।१४।।

उडियो हंस बिन पंख असमान मे ।। धरण की बाडिया सरब धूजी ।।
न्हार बगन्हार सो बन का छापळ्या ।। पाहाड़ के बिच एक नार गुंजी ।।
जाय असमान मे हंस हीरा चुगे ।। खीर अर नीर सो करे न्यारा ।।
त्रिगुटी तगत पर जाय बीराजियो ।। तीन ज्याँ नदियाँ बेहेत धारा ।।
रात हर दिवस वाहाँ हँस केळा करे ।। सेज हि सेज गत चूंण होवे ।।
दास सुखराम कहे हंस उदास हुवो ।। ब्रम्ह के देश की बाट जोवे ।।१५।।

यह हंस पंख के बिना आसमान में उडा। तब धरणी की सभी बाडीया धुजी और वाघ, बगनार,छापळ्या और एक नार ने पहाड से गर्जना की। यह हंस आकाश में जाकर हीरे चुनने लगा और वहाँ दूध और पानी अलग अलग करने लगा मतलब माया और ब्रम्ह का निर्णय करने लगा मेरा हंस त्रिगुटी तख्तपर जाकर बैठा। वहाँ तीन नदीयाँ(इडा, पिंगडा,सुष्मना)यह तीन धारासे बहती है। वहाँ त्रिगुटी में यह हंस जाकर रात-दिन क्रिडा करता है और हंस का वहाँ सहज ही अपने आप का खाना याने भोग हो जाता है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि हंस त्रिगुटी में ऊबकर उदास हो गया और सतस्वरुप ब्रम्ह के देश की बाट देखने लगा। ।।१५।।

मन कळाळ चढ्ढ पाहाड़ के ऊपरे ।। आण भट्टी चुणी खोह माँही ।।
पाँच पच्चिस कूं आण तळ झूंखिया ।। नार नित मद कूं पीण जाही ।।
छिक कर अब सो बके सेंसार मे ।। पीव को भेद सो केहत बारे ।।
लाज अर सरम सो नाय घट ऊपजे ।। इधक सूं इधक सो बात धारे ।।
होय मतवाल मेमंत शिर जोसरे ।। पकड़ कलाल कूं बस कीय ।।
दास सुखराम के नार सो बिरचगी ।। यार सो भाखसी मांहि दीया ।।१६।।

कलाल रूपी मन ने मेरू पहाड के उपर चढकर मेरू के खोह में भट्टी लगाअी। पाँचो इंद्रियों का विषय और पच्चीस प्रकृती लाकर भट्टी के नीचे झोककर जला दी और नार याने सूरत दारू पीने रोज जाने लगी। वह सूरत दारू(प्रेम)पीकर मदोन्मत्त होकर संसार में बकने लगी और वह अपने पती याने शब्द का भेद बाहर बोलने लगी। बाहर बात कहने में लाज या शर्म सूरत के घट में उत्पन्न होती नहीं। वह सुरत शब्द की बात कहने में शर्माती नहीं। यह अधिक से अधिक सभी बाते कहती रहती है और सभी बाते कबूल करती रहती है और यह सूरत मतवाला,मदोन्मत्त मस्त और शिरजोस होकर मन को पकडकर अपने वश में कर लेती। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि यह नारी(सूरत)बदल गयी और इस सुरत नारी ने अपने यार को(शब्द को)अंधेरी कोठरी(भाखसी)में डाल दिया। ।।१६।।

पाड़ सूं मछ सो धस पाताळ ।। ताह के मुख मे चीज भारी ।।
कंवळ षट छेद के सुरत पीछी धरी ।। समंद के बीच अेक खुली बारी ।।
माछली मछ सो रतन कूं ले चल्या ।। पिछम के देश होय जाय उँचा ।।
बीच मे घाट सो बाट बांका घणा ।। आसही पास बोहो घूच घूँचा ।।
बुगला पांचसो घाट पे थुगरहा ।। माछली ऊपरे डाव डारे ।।
दास सुखराम के आद घर पूँचगी ।। ताह सुण मीन कूं कोण मारे ।।१७।।

उपर के पहाड पर मच्छी थी वह पाताल में धंस गयी। उस मच्छी के मुंह पर एक भारी

चीज है। छः कमल का छेदन कर सूरत रूपी मच्छी पिछे रखी। समुद्र के बीच एक खिडकी खुली। मच्छी और मच्छ(सूरत और शब्द)ये रत्न को लेकर चले। वे पश्चिम के देश से(बंकनाल के रास्ते से)होकर उपर जाने लगे। बिच रास्ते में विकट घाट है और रास्ता टेढा-मेढा है। आस-पास बहुत ही अधिक तकलीफ की बिकट जगह है। पाँच बगळे(पाँच इंद्रियो के पाँच विषय)इस घाटपर झपाटा मारने की राह देख रहे है। ये पाँच ही बगळे(पाँच विषय),मच्छी(सूरत)उपर अपना दाव मारती है। मछली रूपी सुरत को अपने पाँच विषय के पास खीचकर पलटाकर लाते। सूरत को ठिकाने पर रहने देते नहीं। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि इतना होकर भी मच्छी याने सुरत आदि घर पहुँच गयी ऐसे आदि घर पहुँचे हुये सुरत को कौन मार सकता है। ।।१७।।

जमना सुरसती गंग जाय खलहले ।। त्रिगुटी घाट पर धेन ब्याही ।।
बाछड्रो बाछड्री दोय थण लागिया ।। सुख की सीर सो सेंग आई ।।
दूवतां दूवतां दूध बोहो नीसरे ।। सांधणी राखिया कम होवे ।।
देह बिन मुख वा पाड़ मे चरत हे ।। संत सुजाण को जाय जोवे ।।
तां दिना भूख भै सब सो मिट गया ।। सेझ बिलोवणो सुंन मांही ।।
दास सुखराम के तत्त घी आवियो ।। दसवें द्वार अब बेस जाही ।।१८।।

गंगा,यमुना व सरस्वती(इडा,पिंगडा और सुष्मना)ये त्रिगुटी में बहती है। उस त्रिगुटी के घाट पर गाय(भक्ती)ब्याही। बछडी व बछडा दो थान में लगे। उस जगह पर सुख की धार आयी। दूहते-दूहते अधिक दूहने से दूध अधिक निकलता है और(सादणी)याने गाय ने दूध की धार यदी चुरा ली तो दूध कम आता है। वह गाय शरीर के बिना और मुंह के बिना पहाड पर चरती है। कोई सुजान संत होगा,वही जाकर इस गाय को देखेगा। उस दिन यहाँ के सुख की भूख और काल का भय सभी मिट जाता है। अपने आप सुन्न में बिलोणा होता है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,उस मंथन से तत्त लोणी निकला। अब मैं दसवेंद्वार पर जाकर बैठ गया। ।।१८।।

पवन के ऊपरे जाय घर बांधियो ।। सूर अर चंद सिर ध्यान लागो ।।
राग छत्तीस घम घोर गरणाट हे ।। दसवें द्वार मे नाद बागो ।।
सुखमण सीर होय नीर जल आवियो ।। घ्राण को कीर ज्याहाँ हीर बूठा ।।
त्रिगुटी सेर मध तीन जग होत हे ।। सुंन सुंधार होय पेम छूटा ।।
नीखरी बात तिहुँ लोक सब सूजियो ।। उलट अस्मान सुइ जाय आगा ।।
दास सुखराम के पार हम पूंचिया ।। जम जालम का भव भागा ।।१९।।

पवन(श्वास)के उपर जाकर घर बनाया। सूर्य और चंद्र(इडा और पिंगडा)इनके उपर

ध्यान लगा। वहाँ छत्तीसों रागीनीयों का घनघोर गरनाट है। दसवेद्वारपर नाद बजने लगा। सुष्मना की(सीर)होकर पानी आया।(घ्राण)नाक का(कीर)है वहाँ हीरे की वर्षा होने लगी। त्रिगुटी शहर में तीन जगह ज्योती है। सुन्न के पास प्रेम छूटा। निखरी( ) बात तीनो लोक सभी दिखने लगा और उलटकर आसमान से भी आगे गया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि मैं पार पहुँच गया। यम बहुत ही जालिम है। उसका मुझे भय नहीं रहा। ।।१९।।

पाहाड़ की खोह मे सिंघ सुण गरजियो ।। तीन गजराज सुण हांक काँपे ।।
पंछ पच्चिस सो बाज सुण ऊडग्या ।। मानवी अेक कूं ताव झाफे ।।
बन का स्याल सुण रीछ अर बांदरा ।। हिरणिया लूंकड़ी सरब भागी ।।
बुगली अेक सुण न्हारी बन में ।। सिंह नी बाज सुण तुरत जागी ।।
भेंसड़ो बन मे चरत ही भाजग्यो ।। पाँच करसांण डर छाड़ खेती ।।
दास सुखराम के सिंघ ओ गाजतां । काळ डर छाडग्यो प्राण सेती ।।२०।।

पहाड के(मेरूदण्ड के)खोह में सिंह(श्वास)ने गर्जना की। तीन गजराज(तीन हाथी, अध्यात्म,आधीभूत,आधीदैवत)और तीन कर्म(क्रियेमान,प्रारब्ध और संचित)ये तीनो हाथी(कर्म),शब्द(सिंह)की गर्जना सुनकर कापने लगे। पाँच विषय और पच्चीस प्रकृती ये शब्द की आवाज सुनकर पक्षी के जैसे उड गये। सिंह रूपी शब्द की आवाज सुनकर),मन रुपी मनुष्य पर त्रास पडने लगा। और वन के कोल्हे( ),अस्वल( ), वानर( ),हरिण्या( ),खेकडी( )से सभी भाग गये और एक बगळी( ) और वाघिन वन में(सीव्हींनी)की आवाज सुनकर तुरंत जाग गयी। भैंसा( )वन में चरते-चरते भाग गया और पाँच शेतकरी(किसान)(पाँच इन्द्रियों के पाँच विषय)खेती करते-करते (विषय रस लेते-लेते),विषय रस लेना छोडकर डरकर भाग गये। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,सिंह(शब्द)गर्जने लगा उसके साथ ही काल डरकर प्राण को छोडकर चला गया। ।।२०।।

सिंह से साग असमान सूं उतऱ्यां ।। मानवी एक कूं संग लीया ।।
लोक परलोक पाताळ सो धूजिया ।। परजा सबे हिल बिली भूपबिया ।।
अणंद उच्छव घर जीव के ऊपना ।। धिन हे धिन हे भाग मेरा ।।
सिरजिया मोह सो साम पधारिया ।। राखसी अब सो मुझ चेरा ।।
मारियो अेक अेवाल सो गाडरो ।। पाँच सुण अनल ले म्रग ऊडयो ।।
दास सुखराम के उलट घर पूंचिया । तीन को अेक कर बांध गुडयो ।।२१।।

सिंह(शब्द),सीसांग( )आसमान से उतरा। एक मनुष्य को साथ में लिया। लोक परलोक और पाताल सभी कांपने लगा। प्रजा में चारो ओर हलचल मच गयी और

राजा(मन)डर गया और इस जीव को आनंद उत्सव उत्पन्न हुआ। मेरा भाग्य धन्य है कि,जिसने मुझे उत्पन्न किया वे मेरे स्वामी मिले ये अब मुझको अपना सेवक बना कर रखेगे। एक मेंढक्या एडका( )मारकर और पांच हिरन लेकर,अनड( )उड गया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,मैं उलट कर घर पहुँच गया और तीनो को (रज,तम,सत)एक ही घर पर बांधकर गुडा दिया। ।।२१।।

राम हि राम रट राम रिझाविया ।। राम रट आतमा खोज लीवी ।।
भजन प्रताप सूं धस पाताल मे ।। उलट असमान मे सीर पीवी ।।
गाजीयो जाय असमान चढ सिखर में ।। सबद मोती झड़े मुख मांही ।।
पवन सो सेंग समाय हे कंवळ मे ।। ता दिना दसवे द्वार जाही ।।
मोख परमोख हर गाय जन पूँचिया ।। सरब सांसा मिटया अब मेरा ।।
दास सुखराम के सांभळो संत जूं ।। मिटग्या सरब रे जन्म फेरा ।।२२।।

मैंने राम ही राम नाम का रटन करके,रामजी को प्रसन्न कर लिया और राम नाम की रटन करके आत्मा में परमात्मा की खोज की। भजनके प्रतापसे पातालमें घुंसकर बंकनालके रास्ते से उलटकर आसमान में जाकर खीर पीया। आसमान में चढकर शिखर में शब्द गर्जना होने लगी। शब्द के मोती मुंह से झरने लगे,पवन(श्वास)जाकर सभी कमलो में समा गयी। जिस दिन दसवेद्वार गया(उस दिन सभी श्वास दसवेद्वार के कमल में समा गयी),मोक्ष और परमोक्ष और हर(रामजी के)नाम का गायन करके मैं पहुँच गया। वहाँ पहुँचने पर अब मेरी जन्म मरन के सभी फिकर मिट गयी। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज सभी संतो को कहते है की,मेरे जन्म मरण के सभी फेरे मिट गये। ।।२२।।

अमर सो तत्त मे अमर बर पाविया ।। अढळ ताळी लगी जाय मेरी ।।
पांच पच्चिस कूं उलट ले चढ गया ।। त्रिगुटी घाट मे सुरत घेरी ।।
तेज ही तेज भरलाट बोहो होत हे ।। मन पकड़ी जग्या सेहेज मांही ।।
जगत जंजाल सेंसार मे चित्त जुँ ।। पलक हुँ छाड़ कर जाय नाही ।।
ब्रम्ह प्रब्रम्ह मे जाय गरकाब हुवा ।। जीव सूं सीव अब होय भाया ।।
दास सुखराम के धिन गुरदेवजी ।। ताह प्रताप हम ब्रम्ह पाया ।।२३।।

अमर तत्त में मुझे अमर वर मिला। अब मेरी अटल ताली लग गयी। पाँच(इंद्रियाँ)और पच्चीस(प्रकृती)इनको उलटा लेकर चढ गया और त्रिगुटी के घाट में जाने पर सूरत ने घेर लिया। वहाँ त्रिगुटी में तेज ही तेज(भरपूर बिजली के जैसा)बहुत सा तेज था। उस त्रिगुटी में मन अपने आप पकड लिया गया। उस ध्यान को छोडकर संसार के जंजाल और संसार में मेरा चित्त पलभर भी नहीं जाता है। इस प्रकार से मन त्रिगुटी में बाँध

लिया गया। मैं ब्रम्ह और परब्रम्ह याने सतस्वरुप में गर्क हो गया। अब जीव का शिव याने सतस्वरुप हो गया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,गुरूदेवजी धन्य है की,गुरूदेवजी के प्रताप से मुझे सतस्वरुप ब्रम्ह मिला। ।।२३।।

ग्यान बिग्यान की घटा दिल ऊपड़ी ।। प्रेम बिरखा बणी सेंस धारा ।।
धरण ज्याँ थरहली नीर बोहो चालिया ।। पीवीया रूंख बन बाग सारा ।।
अणंद उछाव नव खंड मे होविया ।। डेडरा मोर झिंगोर बोल्या ।।
हाळियां हरख बो भाँत सुख ऊपना ।। साहा बोपार ले हाट खोल्या ।।
बीज सो खाध सब पेम सूं पूरवे ।। हल हुँसियार होय खेत बावे ।।
सात नव कांमणी सरब भेळी हुवे ।। रोटिया दोय ले भात जावे ।।
होय हरियाल हरियाल सब बन मे ।। पूरणी धरण सब माल लागो ।।
दास सुखराम के अनंद सब देश मे । काळ अकाळ सो सरब भागो ।।२४।।

अनेक ज्ञान और विज्ञान मन में आये और प्रेम की बारीष होने लगी। हजारो धाराओ से प्रेम आने लगा। पृथ्वी कांपने लगी और बारीष का पानी बहुतसा बहकर जाने लगा। वह पानी(प्रेम)सभी वृक्ष वन और बाग पीने लगे। आनंद उत्सव नवो खंड में हो गया। मेंढक,मोर और झिंगूर बोलने लगे। किसानों का अनेको प्रकार से खुशी हुयी। साहुकार ने व्यापार की दुकान खोली और किसान बीज प्रेम से बोने लगे और किसान चुतुराई पूर्वक जल्दी खेती बढाने लगा। सात( )और नव( )स्त्रीयाँ सभी जमा होकर दो स्त्री खाना लेकर खेत में जाती है और सभी वन हरा ही हरा हो गया और सभी जंगल के जमीन में पूर्ण माल( )लग गया। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि सभी देश में(शरीर में)आनंद होने लगा। काल और दुष्काल ये सभी भाग गये। ।।२४।।

घट मे राव अर घट मे रंक रे ।। घट मे जात छत्तीस होई ।।
घट मे देव अर देवरा घट मे ।। घट मे नार सो पुरष दोई ।।
घट मे बेर अर घट मे सेण रे ।। घट मे सुख अर दुख बासा ।।
घट मे सुभ जू घट मे साच हे ।। घट में द्रब सो सरब आसा ।।
घट मे हाण सो घट मे जीत हे ।। घट मे तिहुँ लोक नव खंड बासा ।।
घट मे चंद जो घट मे सूर रे ।। घट मे रेण सो दिवस मासा ।।
घट मे धरण आकाश सो घट मे ।। घट में धरम अर करम दोई ।।
घट मे पंवन हर पीर सो घट मे ।। घट मे अवतार चोबीस होई ।।
घट मे देव सो बिसन महेस हे ।। घट मे बिरछ सब जीव आवे ।।
भार अठार सो सब घट मांहे ही ।। नीर नीवाण सब वाय क्रावें ।।
भंवर जू बाड़िया पोप घट मांह ही ।। मांय ही ऊपजे मांय मूवा ।।

मांय हि बेद कुराण कूं पढ़िया ।। मांय हि जीव मिल सीव हूंवा ।।
मांय हि प्रेम जु मांय हि नेम हे ।। मांय हि प्रीत इतबार होई ।।
दास सुखराम के मांय हि सुळझणो ।। मांय हि गुरू सिख बसे दोई ।।
मांय हि ग्यान अर मांय हि ध्यान हे ।। मांय सुंण लेत जुं माय सीखे ।।
पिंड ब्रहमंड की अेक बिध जाणिये ।। मांय हि थिर होय मांय भीखे ।।२५।।

इसी घट में राजा है। इसी घट में रंक भी है। इसी घट में छत्तीस जात के मनुष्य है। इसी घट में देव है और इसी घट में मंदिर है। घट में ही स्त्री और पुरूष दोनो है। घट में ही वैरी और दोस्त है और इसी घट में सुख और दुख रहता है। घट में ही शुभ और अशुभ भी रहता है और घट में ही विश्वास और अविश्वास रहता है और इसी घट में सभी द्रव्य है और इसी घट में सभी आशा भी है। घट में ही हानी है और घट में ही विजय है और इसी घट में तीनो लोग और नवखंड निवास करते है। घट में ही चंद्रमा है। घट में ही सूर्य है। इस घट में ही रात और इसी घट में ही दिन भी है। घट में ही महीने है,घट में ही पृथ्वी है। घट में ही आकाश है। घट में ही कर्म और धर्म है। घट में ही वायु है। घट में ही वीर है। चौवीसो अवतार भी घट में ही है और घट में ही तैतीस सभी देव है। घट में ही विष्णु और घट में ही महादेव है। घट में ही सभी वृक्ष और सभी जीव भी है और अठाराह भार वनस्पती सभी घट में ही है। पानी नदी, तालाब और सभी वायु(नाग,कुर्म देवद्त्त,कुर्कल,धनन्जय)घट में है। भंवरे,वाडी और फूल ये सभी घट में ही है। ये सभी घट में ही उत्पन्न होते है और घट से ही मरते है। घट में ही वेद और पुराण सीखता है। घट ये जीव सतस्वरुप शिव से मिलकर सतस्वरुप शिव हो जाता है। घट में ही प्रेम है और घट में ही नियम है और अन्दर ही प्रीती और एतबार है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,अन्दर ही सुलझना भी है और घट में ही गुरू और शिष्य दोनो रहते है। घट में ही ज्ञान है। अन्दर ही ध्यान है। अन्दर ही सुनता है और अन्दर ही सिखता है। इस पिण्ड की और ब्रम्हाण्ड की एक सरीखी ही विधी जानो। अन्दर ही स्थिर होता है और अन्दर ही अस्थिर होता है। ।।२५।।

कवत ।।

घट मे पदवी मोज ।। घट मे नरक निवासा ।।
चल बिचल घट मांय ।। घट मे निरभे बासा ।।
घट मे निरधन धन ।। घट मे सुख दुख दोई
घट मे पाप र पुंन ।। घट मे सब कुछ होई ।।
घट मे मुक्ति मोख हे ।। जे कोई करे विचारा ।।

बिन गुर गम सुखराम क्हे ।। दुख पावे संसार ।।२६।।

घट में ही पदवी है और घट में ही मौज है और घट में ही नर्क निवास है। चळ विचळ( )घट में ही है और घट में ही निर्भय वास है। घट में ही निर्धन और धन है और घट में ही सुख और दुख दोनो है। घट में ही पाप और पुण्य है। घट में सभी कुछ है। घट में ही सतस्वरुपी मुक्ती है और घट में ही सतस्वरुपी मोक्ष है। यदी कोई पूछे,तो सभी घट में ही है परंतु गुरू की जानकारी के बिना सभी संसार दुख भोगता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।२६।।

।। इति घट परचा को अंग संपूरण ।।